अलवर के नाथ सम्प्रदाय की नैतिक शिक्षाएँ

*डॉ. श्रीफूल मीना

भारतीय संस्कृति की मूल विशेषता समन्वयकारिता सदियों से अपना आंचल फैला कर अन्य (विदेशी) संस्कृतियों के समक्ष खडी है। भारत में अनेकों विदेशी आक्रमणकारी तथा व्यापारी प्राचीन काल से आते रहे है, लेकिन भारत अपनी सांस्कृतिक धरोहर को कायम रखा एवं पाचन शक्ति को और अधिक पाचनशील बनाया। भारतीय संस्कृति की तरह ही राजस्थान का एक अंचल (अलवर क्षेत्र) भी अपना आंचलिक प्रभाव दिखाकर अन्यों पर प्रभावी रहा है। अलवर क्षेत्र की संत संस्कृति सदा से ही इस अंचल की सामान्य जनता पर हावी रही है। सम्प्रदायों में संबसे प्राचीन तथा सुदृढ नाथ सम्प्रदाय का जनकल्याण कारी कार्यो एवं नैतिक शिक्षाओं का महत्व अत्यधिक रहा हैं सभी धर्म, सम्प्रदाय, पंथ, आदि के सन्तों में मानव – मानव के बीच किसी भी मानव निर्मित दीवार को ''भस्य'' माना और उसे मानव जीवन के लिए हानिकारक और अनुचित सिद्ध किया। यहां यह संदर्भ सर्वथा समीचीन होगा कि सन्तों पर जाने अनजाने समसामाजिक सूफी विचारधारा का न्यूनाधिक प्रभाव पडा था।

यथार्थ स्थिति से यह प्रतीत होता है कि सन्तों और सूफियों के सहयोग, सम्पर्क और उदार वृन्ति के परिणामस्वरूप दोनों संस्कृतियों के बीच समन्वय स्थापित हुआ। उसके फलस्वरूप उदभूत अभिनव मिश्रित संस्कृति भारतीय धर्म और साधना का आधार बन गई, जो सुदीर्घ काल तक अत्यन्त प्रासांगिक रही। राजस्थान में इस मिश्रित संस्कृति की स्पष्ट चित्र प्राप्त होता है। प्रचुर मात्रा में उपलब्ध भक्तिपरक संत साहित्य इस संस्कृति का सत्यनिष्ठ प्रतिनिधि परिलक्षित होता है। राजस्थान के अधिकांश धर्मप्राण जगत ने इसे सहज ही अपना लिया था और यह लोक सूफी खानखाहों के रूप में मध्यकाल से ही विख्यात हैं पश्चिमी राजस्थान नागौर जैसे क्षेत्र में सूफी परम्परा की एक प्रशस्त और दीर्घ श्रृखला क्रमागत है। आश्चर्य नही कि राजस्थान की धार्मिक संस्कृति का सृजन संवर्धन और परिष्करण का अपना व्यक्तिगत स्वरूप हो, जो अन्य क्षेत्रों में किंचित भिन्न है। यह विचार युक्तियुक्तपूर्ण प्रतीत होता है। कि राजस्थान मिश्रित संस्कृति के हेतु एक विशिष्ट उर्वर क्षेत्र है।

नाथपंथ में चित की दृढता पर विशेष बल दिया गया है। उसके लिए ब्रहचर्य की साधना बहुत महत्वपूर्ण मानी गयी। उसका नैतिक स्वर इतना तीव्र है कि भारतीय कर्म साधना में सम्भवतः ऐसा युग कभी न आया होगा जैसा कि नाथ पंथ के आविर्भाव काल में था। आध्यात्मिक शब्दावली में व्रजयानी साधना में नारी को कामोपयोग तक सीमित कर आचरण की विश्रृखलता और स्वच्छन्दता को विकसित किया था उसका सम्बन्ध वास्तव में न तो धर्म साधना से ही माना जा सकता है और अध्यात्म से इस आधार को गोरक्षनाथ से जिस भाति मोडकर लोकमत की और प्रवाहित किया, उसमें मुख्य है ब्रहाचर्य या बिन्दुधारणा की साधाना। यह प्रवृन्ति मुख्यतया परिब्राजकों और सन्यासियों के लिए एक चुनौती बनकर सामने आयी। ब्रहाचर्य और बालक समय से ज्ञान के प्रति जिज्ञासा योगी की साधना का लक्ष्य बनी। जो आदर सदियों से प्राप्त था। उसकी पुनः प्रतिष्ठा के प्रयत्न भी इसके द्वारा किये गये। शुद्ध और उदान्त जीवनयापन के द्वारा धर्म साधना को नई, प्रेरणा देकर इन्द्रियनिग्रह पर बल दिया। शारीरिक शुद्धि और मन के उपार्जन पर साधना का मूल्यांकन प्रारम्भ हुआ, लोकभाषा में जिसकी अभिव्यक्ति अनेक प्रकार से उपलब्ध होती है।[1]

आचरण की नैतिक शुद्धता तक ही नाथ पंथ की साधना सीमित न रही। नाथ पंथी योगी डटकर जाति भेद पर आघात करते थे, ब्राह्माचार और तत्मूलक श्रेष्ठता को फटकारते थे। भीतर और बाहर योगमार्ग का प्रत्येक अनुयायी अपने समाज के अन्य निकृष्ट जीवों से श्रेष्ठ समझता था, दुसरों की बहिर्मुखी वृन्ति पर तरस खाता था।[2] नाथ पंथ में काया साधना तथा योग की प्रमुखता होने के कारण उसमें स्मार्त आचारों के प्रति अवहेलना का भाव दृष्टत्य होता है। बाहरी आचार विचार एवं पुस्तकी ज्ञान का वहां कोई महत्व नही था।[3] भारतीय धर्म साधना में इस प्रवृत्ति का अभिर्भाव ईसा पूर्व छठी शताब्दी में ही हो गया था। नाथपंथी ने भी आचारों और कर्मकाण्ड को भी प्रोत्साहन नही किया। जिस लोकभूमि पर खडें होकर गोरक्षनाथ ने अपने योगमार्ग का प्रवर्तन किया। ब्राहाण धर्म विरोधी प्रवृत्ति का अभिर्भाव हुआ वह घटना आकस्मिक नहीं कही जा सकती।

यह स्वभाविक चिंतनधारा का ही परिणाम है फिर भी गोरक्षनाथ के नाथ पंथ में केवल ब्राहाण आचारों के प्रति उपेक्षा भाव नहीं है। वरन् तत्कालीन ब्राहाडम्बर तथा आचारहीनता के प्रति आक्रोश भी है, गोरक्षनाथ का कथन है –

''भूरिष सभा न बैसिवा अवधू, पंडित सौ न करिवा वादं।
राजा संग्रामें झूझ न करबा हेले न बोड्वा नादं।।''[4]

स्मार्त आचारों की अवहेलना के उत्तर में जब कर्मकाण्ड ने वेद शास्त्र की दुहाई दी तब बुद्ध जीव की मुर्खता की हंसी उडाने के लिए वेद एवं शास्त्रों की भी अवहेलना नाथपंथियों द्वारा की गयी। अनुभव और बुद्धिजन्य ज्ञान दोनों में योगियों ने अनुभव को सर्वोपरी माना। दुसरी और लोकमानस में बिखरे हुए नीतिपरक उपदेश भी योगियों द्वारा दिये गये जो व्यवहार के द्वारा सहज ही ग्रहजीव हो सकते थे।

जगत के कल्याणकारी कार्यो एवं नैतिक शिक्षा के लिए नवनाथों के क्रम से उपदेश है –[5]

1. श्री आदिनाथ भागवत धर्म का स्थापक स्वरूप समझाते है।
2. श्री उदयनाथ जी भगवत भक्त के लक्षण बताते है।
3. श्री सत्यनाथ माया का स्वरूप समझाते है।
4. श्री सन्तोषनाथ जी संसारी मनुष्य माया के पार किस तरह जा सकते है इसका उपदेश देते है।
5. श्री अचलनाथ जी भगवान का स्वरूप समझाते है।
6. श्री गजकंथाडिया जी कर्मयोग का उपदेश देते है।
7. श्री चोंरगीनाथ जी भगवान की लीलाओं का वर्णन करते है।
8. श्री मत्स्पेन्द्रनाथ जी अतृप्तनाम अभक्त मानवों की गति का वर्णन करते है।
9. श्री गोरक्षनाथ जी विविध युगों में भगवान के विविध रंग, नाम आकृति व पूजा विधि का वर्णन करते है।

लोक व्यवहार तथा पारिवारिक एवं सामाजिक समस्याओं का अद्भुत ज्ञान रखने वाले इन नाथ सन्तों ने सदा ही लोगों को पारिवारिक एवं सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए बराबर सलाह देते थे।''[6]ढूढते हुए परिवारों की समस्याओं को ध्यान में रखकर उन्होने कुटुम्ब भावना पर बल दिया और युवा पीढी को अपने माता – पिता की सेवा करने के लिए प्रेरित किया। आजादी के बाद की संक्रमण स्थिति का उल्लेख करते हुए उन्होने कहा था कि इस समय परिवार और समाज को बचाये रखना बडा आवश्यक है। लगता है इस समय पर अधड आया हुआ है जो हमारी मूल आदर्श भावना को खत्म कर रहा है। और हम दिशाहीन होकर इस अंधड में उड रहे है। विभिन्न स्थानों पर भ्रमण करते हुये वे सदाचार एवं व्यावहारिक जीवन के ज्ञान की चर्चा करते थे। तथा तीन बातों पर विशेष बल देते थे। पहली सद्गुरू पर विश्वास एवं आज्ञापालन, दुसरी इष्टदेव की नित्यनियम से प्रार्थना एवं पूजा तीसरी सबसे प्रेम भावना एवं सदमार्ग पर चलना। सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए बराबर सलाह देते थे।

विद्वानो के द्वारा स्वामी शंकराचार्य के ब्रह्मवाद को बोद्ध अनात्मवाद का प्रत्युत्तर ही समझ लिया जाये तो तात्कालिक परिस्थितियों के आधार पर कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए बराबर सलाह देते थे।

विद्वानो के द्वारा स्वामी शंकराचार्य के ब्रह्मवाद को बोद्ध अनात्मवाद का प्रत्युत्तर ही समझ लिया जाये तो तात्कालिक परिस्थितियों के आधार पर कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है।''[7]

दृष्टव्य केवल इतना ही है कि नाथ पंथी साधना का स्वर निर्गुण ''करनीवादी'' स्वर है जो सहज प्राप्त नहीं कहा जा सकता।''[8]

सन्तो ने आडम्बरों को व्यर्थ के स्वांग की संज्ञा देते हुए मात्र ईश नाम स्मरण रूपी साधना का आश्रय लेने का उपदेश दिया है। इसी कड़ी में कुछ सन्तो ने अपनी सिद्धियों तथा चमत्कारों को प्रधानता प्रदान की। मल्लीनाथ जी ने 1399 ई. में विशाल हरि–कीर्तन आयोजित करवाया था।''[9]

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार इस मार्ग (नाथ सम्प्रदाय) में कठोर ब्रह्मचार्य, वाक संयम, शारीरिक सोच, मानसिक शुद्धता, ज्ञान के प्रति निष्ठा वाद्य आचरणों के प्रति अनादर आन्तरिक शुद्धि और मद्यमांसादि के पूर्ण बहिष्कार पर बल दिया।''[10]

इस प्रकार नाथ सम्प्रदाय का सभी समाजों का नैतिक उत्थान करने में महत्वपूर्ण योगदान रहा इन के नियमों की पालना से मनुष्य का नैतिकता, पवित्रता, मानवता आदि का विकास हुआ। और आज वर्तमान दौर में भी जब समाज में मनुष्य को नैतिक पतन गिर रहा है तो इन नाथ सन्तों द्वारा वही भूमिका निभाई जा रही है। जो पहले निभाई थी यानी समाज को इस संकट पूर्ण स्थिति से बाहर निकाल रहे है और इनकी यह भूमिका समाज में सदा रहेगी।

***सह आचार्य,**

इतिहास विभाग,

राजकीय कला महाविद्यालय दौसा

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

1. देव कला से संजय रहिबा, भूतकला अंहार। मन पवना तो उनयनि धरिया, भूतकला अहार'।। गोरक्षबानी, सबदी 34, पृ. 13
2. हिन्दी साहित्य, दास श्यामसुन्दर पृ. 130
3. कबीर, द्विवेदी डॉ. हजारी प्रसाद पृ. 153।
4. गोरक्षनाथ, संबंधी 121 पृ. 43 .
5. नवनाथ चरित्र एवं सिद्धान्त सार, शास्त्री प्रकाशनाथ पृ. 207
6. धाये न सार्पण, भूषे न मरिया। अहनिसि लेब ब्रह्म अगनिका भेद, गोरखवानी पृ 12
7. योग प्रवाह, वडथ्वाल डॉ. जीताम्बर दत्त पृ. 179
8. नाथ पंथ और निर्गुण सन्त काव्य, सोलंकी डॉ. कोमल सिंह पृ. 129
9. कूमांवत राठौडो का इतिहास सिंह राव शिवनाथ पृ. 51
10. नाथ सम्प्रदाय द्विवेदी डॉ. हजारी प्रसाद पृ. 204